Peer Reviewed/ Refereed Journal

ISSN -PRINT-2231-3613ONLINE2455-8729
International Educational Journal
CHETANA
Impact Factor SJIF=4.157

Received on 29th July 2019, Revised on 4th August 2019; Accepted 9th August 2019

आलेख

स्वामी विवेकानन्द की शिक्षा दृष्टि और वर्तमान में प्रासंगिकता

* पिंकी मीना
शोधार्थी, शिक्षा विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
Email- meenaakhleshkumar@yahoo.com

मुख्य शब्द . *पुस्तकीय ज्ञान, आत्मिक शिक्षा, शारीरिक शिक्षा आदि।*

सारांश

भारत वर्ष आदिकाल से महापुरूषों की जन्मभूमि माना गया है। इन सभी महान आत्माओं ने सांस्कृतिक विरासत को अपनी आध्यात्मिक विचारधाराओं से विकसित किया। भारत के विश्व प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री रवींद्रनाथ ठाकुर, महर्षि अरविंद, डॉ0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन, जाकिर हुसैन, महात्मा गॉधी आदि के साथ लिया जाना वाला स्वामी विवेकानन्द का नाम भी प्रमुख है। स्वामी विवेकानन्द जी वह महान विभूति थें जिन्होंने वेदान्त सिद्धान्त तथा व्यावहारिक वेदान्त को लोक जीवन का संबल बनाया। शिक्षा को सबसे अचूक अधिकार बताते हुए कहते है कि व्यक्ति का सर्वांगिण विकास शिक्षा द्वारा ही सम्भव है। स्वामी जी का विचार था कि "शिक्षा व्यक्ति में अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति है।" उन्होंने किताबी ज्ञान के साथ–साथ आत्मिक विकास को अनिवार्य माना है। आत्मिक शिक्षा एवं शारीरिक शिक्षा को महत्व दिया है। स्त्री शिक्षा की अनिवार्यता पर बल देते हुए उन्होंने स्वीकार किया है कि "जो देश व राष्ट्र स्त्रियों का आदर नही करते वे कभी बडे नही हो पाए है, और न भविष्य में कभी होगें।" क्या पढ़ाया जाना चाहिए और कैसे पढ़ाया जाना चाहिए यह प्रश्न एक अन्य गम्भीर प्रश्न से सम्बन्धित है और वह यह है कि वे कौन से उद्देश्य है जो शिक्षा द्वारा प्राप्त होने योग्य है– क्षमताओं एवं मूल्यों के बारे में यह दृष्टि जो प्रत्येक व्यक्ति के पास होनी चाहिए। शैक्षणिक पद्धतियाँ ,पाठ्यक्रम व उद्देश्य अनुरूप हो। उनके शिक्षा संबंधी विचारों में सर्वत्र एक नयी ताजगी और स्फूर्ति परिलक्षित होती है जो किसी भी शिक्षा व्यवस्था को बोझित होने से बचाती है प्रस्तुत आलेख मे स्वामी विवेकानन्द की शिक्षा दृष्टि और उसकी प्रासंगिकता पर प्रकाश डाला गया है।

प्रस्तावना

स्वामी विवेकानन्द जी शिक्षा को कोई ब्राह्य वस्तु के रूप मे स्वीकार नहीं करते थें चूँकि उनकी मान्यता थी कि बालक जब जन्म लेता है तो अनन्त शक्तियों का आगार उसके अन्तरमन मे छिपा रहता है। इन शक्तियों को हम जितना अधिक विकसित कर पाते है। उतना ही अधिक हम उन्हे शिक्षित करते है। पुस्तकीय ज्ञान को वे शिक्षा नही मानते। उनके अनुसार शिक्षा वास्तव में वह प्रशिक्षण है जिसके द्वारा व्यक्ति को आन्तरिक विचारो पर नियंत्रण प्राप्त हो सकें साथ ही चरित्र निर्माण भी हो।

स्वामी जी शिक्षा द्वारा नवयुवकों का निर्माण करने का आह्वान करते हुए कहते हैं– "मेरे वीर, श्रेष्ठ उदान्त बन्धुओं– अपने कन्धों का कार्य चक्र में लगा दो, कार्यचक्र पर जुट जाओं, ठहरो मत, पीछे मत देखों– न नाम के लिए, न यश के लिए और न ही किसी निरर्थक वस्तु के लिए। व्यक्तिगत अहममन्यता को एक ओर फेंक दो और कार्य करो। स्मरण रखो, घास के अनेक तिनकों को जोड़कर जो रस्सी बनती है, उससे एक उन्नत हाथी भी बॉधा जा सकता है।"

शिक्षा के अर्थ की व्याख्या उन्होंने बहुत ही विशाल सन्दर्भ में की है। वे जीवन के रहस्य को मौन के रूप में स्वीकार नही करते वरन् अनुभव द्वारा शिक्षा ग्रहण करने को ही जीवन का रहस्य मानते है। स्वामी जी का मानना था कि शिक्षा मनुष्य मे विद्यमान पूर्णता की अभिव्यक्ति है, जो चिरकाल से हमारे अन्दर विद्यमान है। उनके विचार मे शिक्षा वह साधन है जिसके द्वारा मनुष्य की शक्तियों की वृद्धि होकर बौद्धिक विकास होता है आज के इस संक्रमण काल में हमारे देश के नव–युवकों को ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जिससे वह विश्व के रहस्यपूर्ण तथ्यों को समझ सकें। जो शिक्षा मनुष्य में आत्म–विश्वास नही लाती व्यक्तिगत विचारों को मौलिकता की प्रेरणा नही देती, उनमें भावात्मक एकता की जागृति नहीं' करती, वह वास्तव में शिक्षा नहीं है।

शिक्षा के उद्वेश्यः– शिक्षण के उद्वेश्यों की चर्चा स्वामी विवेकानन्द जी ने बहुत व्यापक रूप में की है। शिक्षा का प्रथम उद्वेश्य स्पष्ट करते हुए वे बताते है कि आन्तरिक पूर्णता का बाह्य प्रकाश (म्गजमतदंस मगचतमेपवद व िमदजमतदंस चमतमिबजपवद) इसी कारण वह यह मानते है कि शिक्षा मनुष्य में निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति है। उन्होंने शिक्षा का एकमात्र लक्ष्य आध्यात्मिक विकास को माना है। जिसे वह मानव निर्माण के लिए आवश्यक मानते हैं। शिक्षा का दूसरा उद्वेश्य व्यक्तित्व में मनुष्यत्व के विकास को मानते हैं। मनुष्यत्व का अर्थ स्पष्ट करते हुए वह कहते है, ”मनुष्यत्व का तात्पर्य उन लौकिक एवं अलौकिक सद्‌गुणों को धारण करना है जिनसे मनुष्य में सद्‌गुण आ सकें।” सद्‌गुणों की श्रेणी में आत्म–विश्वास, आत्म–श्रद्वा, आत्म–चेतन हो उठता है, तब उसके अन्दर यह भावना आती है, ”उठो जागो तब तक न रूको जब तक कि परम लक्ष्य प्राप्ति न कर लो।” शिक्षा के उद्वेश्यों की श्रृंखला में तृतीय और महत्वपूर्ण लक्ष्य वह मानव समाज की सेवा करना मानते है। स्वामी जी का मानना था कि सेवाभाव उत्पन्न करने के लिए व्यवहारिक अवसर अवश्य मिलने चाहिए। वह मानते थें कि यथार्थ शिक्षा का लक्ष्य मानव सेवा द्वारा ईश्वर की सेवा करना है। उन्होंने शारीरिक विकास की शिक्षा पर भी बल दिया स्वामी विवेकानन्द जी का मानना था कि संसार में यदि कोई पाप है तो वह है दुर्बलता। अतः इस दुर्बलता का परित्याग करो। वह कहते है, ”हमें खून में तेजी और स्नायुओं में बल की आवश्यकता है। लोहे की भुजाएँ और फौलाद के स्नायु चाहिए, न कि दुर्बलता लाने वाले निरर्थक विचार।” आदर्शो की बात करते हुए उन्होंने जीविकोपार्जन को भी शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्वेश्य माना है शिक्षा द्वारा आर्थिक लाभ अवश्य होना चाहिए यही भारत में व्याप्त गरीबी व भूख का निदान करने में सहयोगी होगा। इन सब उद्वेश्यों के साथ ही विश्वबन्धुत्व व विश्व–चेतना का विकास करना शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उद्वेश्य बताया है।

शिक्षण पद्धतियाँः– शिक्षण पद्धतियों के प्रयोग के सम्बन्ध में स्वामी विवेकानन्द जी की शिक्षा दृष्टि थी कि सर्वश्रेष्ठ पद्धति ध्यान की एकाग्रता है चूँकि कोई भी ज्ञान इसके बिना ग्रहण नही किया जा सकता। मन की एकाग्रता ही शिक्षा का मूल है। चाहे वह अति सामान्य व्यक्ति हो या उच्च योगी हो, सभी को ज्ञान प्राप्ति हेतु यह पद्धति अपनानी चाहिए। जितनी अधिक एकाग्रता होगी उतना ही अधिक ज्ञान प्राप्त होगा। कर्म के किसी भी क्षेत्र में सफलता एकाग्रता का परिणाम है। उन्होंने जिन विधियों के प्रयोग पर विशेष बल दिया है, वह इस प्रकार हैः–

(अ) धर्म या योग विधि (Dharma or yoga Method)

(ब) केन्द्रीयकरण विधि (Method of Concentration)

(स) उपदेश विधि (Method of Preacting)

(द) अनुकरण विधि (Imitation Method)

(य) निर्देशन या परामर्श विधि (Guidance and Counselling Method)

(र) कियात्मक एवं व्यावहारिक विधि (Activity and practical method)

धर्म या योग विधि जिसकी चर्चा स्वामी विवेकानन्द जी ने की है, वह गीता मे वर्णित चित वृत्ति निरोध के समकक्ष है। योग क्रियाओं को वे मन की शक्तियों पर नियंत्रण करने वाली मानते थें। केन्द्रीयकरण विधि में व्यक्ति को अपने मन को एकाग्र व केन्द्रित करना

पडता है जिससे उसकी चंचलता दूर हो जाये। वह कहते है यदि मुझे फिर से शिक्षा ग्रहण करनी पड़े तो मैं तथ्यों का अध्ययन न करूँ। मैं तो ध्यान को करने की शक्ति और निस्पृहता का विकास करूँ और तब तक पूर्ण साधना के द्वारा केन्द्रित अपनी इच्छानुसार तथ्यों का संग्रह करूँ। उपदेश विधि के अन्तर्गत उनका विचार है कि शिक्षा से मेरा विचार गुरू गृहवास से है। प्राचीनकाल में भारत मे प्रचलित इस प्रथा के वे समर्थक थे उनका मानना था कि गुरू वास में छात्रों को विचार, विमर्श, तर्क–वितर्क, शंका का समाधान आदि का अवसर प्रदान किया जाता था जिससे शिक्षक –शिक्षार्थी सम्बन्ध घनिष्ठ व मधुर बनते थें। उन्होंने सेमिनार व ट्यूटोरियल कक्षाओं पर विशेष बल दिया। अनुकरण विधि के लिए उनका विचार था कि गुरू को एक आदर्श का प्रतीक होना चाहिए जिससे छात्र उसका अनुकरण करके सही दिशा की ओर उन्मुख हो सकें। व्यक्तिगत निर्देशन व परामर्श विधि के प्रयोग पर भी बल दिया। यह विधि व्यक्तित्व की पूर्णता की अनुभूति के लिये थी। क्रियात्मक या व्यवहारिक विधि का प्रयोग की बात करते है तो वह साधु–संगति, भ्रमण, सेवा–कार्य, उद्योग, शिल्प कौशल, खेल–कूद, शारीरिक शिक्षा आदि के ऊपर बल देते है।

शिक्षा का पाठ्यक्रम

स्वामी विवेकानन्द जी पाठ्यक्रम की बात करते हुए कहते है कि क्या पढ़ाया जाना चाहिए, यह प्रश्न एक अन्य गम्भीर प्रश्न से सम्बन्धित है और वह यह है कि वे कौन से उद्देश्य है जो शिक्षा द्वारा प्राप्त करने योग्य है। पाठ्यक्रम की अन्तर्वस्तु का चयन इस प्रकार हो कि वह सम्पूर्ण उद्देश्य पुंज तथा साथ ही समाज के लिए उसकी सामाजिक राजनैतिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि के लिए न्याय संगत हो तथा व्यापक एवं संतुलित हो। उन्होंने पाठ्यक्रम को दो श्रेणी में विभाजित किया।

(i) लौकिक पाठ्यक्रम (ii) आध्यात्मिक पाठ्यक्रम

(प) लौकिक पाठ्यक्रम में (1) भाषा–संस्कृत, मातृभाषा, प्रादेशिक भाषा व अंग्रेजी को सम्मिलित किया। (2) विज्ञान (3) मनोविज्ञान (4) गृह–विज्ञान (5) तकनीकी शास्त्र (6) उद्योंग कौशल (7) कला, संगीत, अभिनय व चित्रण (8) कृषि व व्यवसायों की शिक्षा (9) इतिहास (10) गणित (11) अर्थशास्त्र (12) भूगोल (13) राजनीति (14) राष्ट्र–सेवा (15) खेल–कूद।

(पप) आध्यात्मिक पाठ्यक्रम के अन्तर्गत उन्होने जो विषय रखे वे हैः– (1) धर्म एवं दर्शन, (2) पुराण, (3) उपदेश, श्रवण, (4) कीर्तन, (5) साधु–संगत, (6) गीत व भजन।

शिक्षक व शिक्षार्थी सम्बन्ध

स्वामी विवेकानंद जी की दृष्टि से शिक्षा योजना में शिक्षक का स्थान बहुत ही महत्वपूर्ण है। वह छात्र का पथ–प्रदर्शक व सहायक होता है उनकी दृष्टि में शिक्षक के अन्दर निम्न गुणों का होना आवश्यक है– शिक्षक को आध्यात्मिक, दृष्टि से दिव्य व परिपक्व साथ ही धार्मिक ग्रन्थों के सार–तत्वों से अवगत होना चाहिए। मानव निर्माण के दायित्वों को निभाने के लिये शिक्षक को व्यवहारिक, त्याग, साहस, उत्साह विश्व–बन्धुत्व आदि गुणों से परिपूर्ण होना चाहिए। सफल मनौवैज्ञानिक, दण्ड विरोधी प्रवृति का गुण भी आवश्यक है।

शिक्षको के गुणो के साथ–साथ विधार्थीयों के लिये भी महत्वपूर्ण गुणों की परिकल्पना की है जो निम्न है– विधार्थी को सत्य को जानने वाला, धर्मपरायण, कर्त्तव्यनिष्ठ, जिज्ञासु, विधा–प्रेमी, विचार व विवेकशील, स्वप्रयत्नशील, गुरू के लिए श्रद्वा रखने वाला सुख व भोगो का त्याग करने वाला आदि होना चाहिए। गुरू शिष्य के मध्य पिता–पुत्र तुल्य आत्मिक सम्बन्ध होना चाहिए। गुरू–शिष्य के सम्बन्ध में जो स्वामी विवेकानन्द जी की दूर दृष्टि थी वो वर्तमान समय में काफी प्रासंगिक सिद्ध हो सकती है। यदि शिक्षक–शिक्षार्थी उनके द्वारा सुझाये गये गुणों का अवलम्बन करे तो उनके सम्बन्ध और अधिक मधुर बनकर घनिष्ठ बन सकते है। शिक्षक–शिक्षार्थी इन गुणों को अपनाकर राष्ट्र की उन्नति में अपना योगदान दे सकते है।

स्त्री शिक्षा

इसके संबंध में भी स्वामी विवेकानंद जी ने स्त्रियों की सभी समस्याओं के हल के लिए शिक्षा को ही मुख्य चाबी माना है। वह कहते है कि जनसाधारण में स्त्रियों की शिक्षा का प्रसार किये बिना उन्नति का कोई उपाय नहीं है। उन्होंने जेंडर असमानता को गलत मानते हुए समानता का अवसर प्रदान करने की बात कही। नारी को इस प्रकार की शिक्षा देना चाहिए जिससे वह स्वावलम्बी बन सकें। उनकी आकांक्षा थी कि अपने देश मे ऐसी स्त्रियाँ हो जो विदेशों मे जाकर प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं उच्च आदर्शो की व्याख्या कर सकें तथा वेदान्त, गीता, रामायण, महाभारत आदि के विचार वहाँ व्यक्त कर सकें।

चरित्र शिक्षा

चरित्र शिक्षा पर स्वामी विवेकानन्द जी ने अपना दृष्टिकोण रखते हुए यह स्वीकार किया कि चरित्र निर्माण में विचारों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यदि हमारे विचार ऊँचे है तो चरित्र भी उच्च श्रेणी का होगा। उनका मानना था कि नवयुवकों में गुणात्मक सुधार कर देना ही वास्तव में शिक्षा है।

राष्ट्रीय शिक्षा

राष्ट्रीय शिक्षा के सम्बन्ध में स्वामी जी ने अपने यह विचार व्यक्त किये है वह चाहते थें कि शिक्षा का प्रारम्भ घर होना चाहिए व उसका प्रसार वृहत् समाज मे होना चाहिए जिससे वह छात्रों के संकुचित प्रेम दायरे को विश्वव्यापी प्रेम में परिवर्तित कर दे। वे संकुचित राष्ट्रीय भावना के प्रबल विरोधी थें। वे शिक्षा को राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप बनाना चाहते थें उनका मानना था कि यदि राष्ट्र को महान बनाना है तो तीन बातें आवश्यक हैः– सद्वृत्ति की शक्ति पर अड़िग श्रद्वा, अविश्वास और ईर्ष्या से मुक्ति तथा, सत प्रवृति एवं सत्कार्य में रत व्यक्तियों के प्रति सहयोग का भाव।

बाल शिक्षा

बालकों की शिक्षा में धर्म का स्थान स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा कि विश्व की महान विभूतियों के प्रति श्रद्वा तथा आदर की भावना जाग्रत करना धर्म के अन्तर्गत आता है। वे महान आत्माएँ जिन्होंने सत्य की खोज के लिए आत्मोत्सर्ग कर दिया है,उनके आदर्शो का अनुसरण करना सिखाना चाहिए। इनके चरित्रों का चिन्तन और मनन करके बालकों के हृदय की दुर्बलता को नष्ट करना होगा।

निष्कर्ष

स्वामी विवेकानंद जी की शिक्षा दृष्टि भारतवर्ष के संदर्भ मे बहुत ही सार्थक और प्रासंगिक है। उन्होने आज के और भविष्य के मनुष्य से सम्बन्ध रखने वाले लगभग सभी विषयों और मुद्दों पर बात की इस मामलें में उनकी विशाल शिक्षा दृष्टि में राष्ट्रीय शिक्षा, धर्म शिक्षा, स्त्रीशिक्षा, चरित्र शिक्षा, कृषि व्यवसाय की शिक्षा, धर्म एवं दर्शन की शिक्षा, बाल विकास की शिक्षा जैसें विभिन्न विषय सम्मिलित है। शिक्षा को उन्होंने सैद्धान्तिक मात्र ही नहीं समझा वरन उसे एक व्यवहारिक प्रक्रिया के रूप में भी देखा जो हमारा चरित्र निर्माण करती है और हमें मानव बनने में सहयोग देती है। उन्होंने वेदान्त के सिद्धान्तों को व्यवहारिक जीवन में प्रयोग करने पर बल दिया। स्वामी विवेकानंद की शिक्षा दृष्टि वर्तमान संदर्भ में काफी प्रासंगिक है क्योंकि राष्ट्रीय एकता, अर्न्तराष्ट्रीय एकता व शान्ति, सांस्कृतिक सद्भावना को भी एक दिशा प्रदान करती है। उन्होंने आज से सवा सौ साल पूर्व जिस बाल–केन्द्रित शिक्षा का बीज रोपा था उसके पल्लवित एवं विकसित रूप में आज हर बालक को महत्वपूर्ण माना जा रहा है। उन्होंने शिक्षा में जिन मूल्यों, और उद्देश्यों की बात की थी उनकी तरफ आना वर्तमान में हमारी जरूरत है। इस तरह हम कह सकते है कि स्वामी विवेकानन्द की शिक्षा दृष्टि आज भी सार्थक एवं प्रासंगिक है और भविष्य में भी रहेंगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. श्रीवास्तव, रश्मि. 2009. विवेकानन्द के स्त्री शिक्षा संबंधी विचार (सार्थकता एवं प्रासंगिकता). भारतीय आधुनिक शिक्षा, वर्ष 30, अंक 1 जुलाई 2009, पृष्ठ 116
2. स्वामी विवेकानन्द का शिक्षा दर्शन, अरूण प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 2012,पृष्ठ 63
3. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, 2006, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2005 , नई दिल्ली, पृष्ठ 16
4. मुमुक्षानंद, स्वामी.2004 . विवेकानन्द साहित्य, खण्ड–4, अद्वैत आश्रम प्रकाशन, कोलकता पृष्ठ 22
5. स्वामी विवेकानन्द का शिक्षा दर्शन, अरूण प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 2012 पृष्ठ 56
6. वर्मा, अरूण कुमार. 2013 स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा संबंधी विचार (सार्थकता एवं प्रासंगिकता), भारतीय आधुनिक शिक्षा, वर्ष 34, अंक 1 जुलाई 2013
7. सक्सेना, डा0 सरोज, शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा, संस्करण 2007, पृष्ठ 383, 389
8. स्वामी विवेकानन्द और शिक्षा, राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद, नई दिल्ली, मॉ–2, मॉ–3, पाठ्यक्रम और शिक्षण पद्धतियॉ
9. स्वामी विवेकनन्दः (संक्षिप्त जीवनी) अद्वैत आश्रम, कोलकता, 2013.

   वही पृष्ठ 13

   वही पृष्ठ 14
10. रघुनाथ भिड़े, निवोदिता : स्वामी विवेकानन्द का दृष्टिकोण और भारतीय स्त्री जीवन–भाभी पथ, विवेकानन्द केन्द्र, हिन्दी प्रकाशन विभाग जोधपुर, 2014.

*** Corresponding Author:**

पिंकी मीना, शोधार्थी,

शिक्षा विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

Email- meenaakhleshkumar@yahoo.com